वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं.-196

ऋषभदेव नृत्य नाटिका

लेखिका :

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

प्रकाशक :

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र. 250404

6 जून, 2000, ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी

प्रथम संस्करण	मूल्य
2000 प्रति	4-00

ऋषभदेव नृत्य नाटिका

प्रार्थना (सामूहिक स्वर में)

तर्ज - बहुत प्यार करते हैं.....

ऋषभदेव प्रभु को है, मेरा नमन।
चरण में समर्पित-२, हैं भक्ति सुमन।ऋषभदेव.।।

मरुदेवी माता के घर, रत्न खूब बरसे।
अयोध्यापुरी में पिता, नाभिराय हरषे।।
चैत्रवदी नवमी को-२, हुआ प्रभु जन्म।ऋषभदेव.।।१।।

इस युग के आदिब्रह्मा, ऋषभदेव स्वामी हैं।
पुरुदेव तीर्थंकर की, पदवी से नामी हैं।
अवध की प्रजा व धरती-२, हुई धन्यधन।ऋषभदेव.।।२।।

राजसुख को भोग उसको त्याग दिया क्षण में।
बनकर के जिनवर राजें, समवसरण में।।
"चन्दना" हुए वे अपने, आप में मगन।ऋषभदेव.।।३।।

शंभुछन्द-(सूत्रधार के द्वारा)

यह भारत आज नहीं युग से ऋषियों की गाथा कहता है।
यहां गंगा यमुना सरस्वती नदि का पावन जल बहता है।।
इस धरती की चन्दन रज को मेरा मन वन्दन करता है।
सूरज भी अपनी किरणों से इसका अभिनन्दन करता है।।१।।

इसकी पावनता को शब्दों की सीमा नहिं कह सकती है।
सतयुग से आज के कलियुग तक दिख रही यहाँ तप शक्ति है।।
चाहें हों पुरुष तथा नारी सबने कर्तव्य निभाया है।
भारतीय संस्कति का महत्व सारे जग में बतलाया है।।२।।

जैसे त्रिलोक में गिरि सुमेरु सबसे ऊँचा कहलाता है।
धर्मों में धर्म अहिंसा ज्यों प्राकृतिक धर्म कहलाता है।।
देशों में भारत देश जो सोने की चिड़िया कहलाता है।
वैसे ही ऋषभदेव प्रभु का माहात्म्य श्रेष्ठ सुखदाता है।।३।।
जिनवर में श्रेष्ठ व ज्येष्ठ प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव माने।
उनको ही आप युगादी के स्रष्टा पुरुदेव देव जानें।।
असि मसि कृषि आदि क्रियाओं के वे आदि विधाता कहलाए।
कृतयुग की आदी में जन्में वे आदिबह्म भी कहलाए।।४।।
उन ऋषभदेव के जीवन पर कुछ अभिनय यहाँ दिखाना है।
बीते युग की बातों का ही स्मरण तुम्हें करवाना है।।
हे बन्धु! मेरा यह लघु प्रयास सूरज को दीप दिखाना है।
बस भाव मेरा प्रभु सन्देशों को जन जन में पहुँचाना है।।५।।

(देखें अब, तृतीय काल के अन्त का दृश्य, जब धरती पर भोगभूमि का समापन एवं कर्मभूमि का शुभारम्भ हो रहा था)

तर्ज- दीदी तेरा.....

बीते युग की बातें बताऊँ, ऋषभदेव के गुणों को मैं गाऊँ।
तीर्थंकर की महिमा बताऊँ, ऋषभदेव के गुणों को मैं गाऊँ।।
जय जय जय, जय जय जय जय हो प्रभो....
धरा पर थी जब भोगभूमि व्यवस्था, सभी कल्पवृक्षों से फल माँगते थे।
विषय भोगों के सुख बहुत थे वहाँ पर, न वे कर्मभूमि के दुख जानते थे।।
वही गाथा तुमको सुनाऊँ, ऋषभदेव के गुणों को मैं गाऊँ।। बीते....
तभी एक दिन ऐसा आया कि जब, कल्पवृक्षों ने फल देना बन्द कर दिया था।
सभी भोगभूमि के नर नारियों को, परिस्थिति ने चिन्तामगन कर दिया था।।
उनका दुख अब कैसे बताऊँ, ऋषभदेव के गुणों को मैं गाऊँ।।

(भोगभूमि में पहले माता के गर्भ से पुत्र-पुत्री का युगल जन्म होता था किन्तु वहां संयम न होने से मोक्ष की परम्परा नहीं चलती थी पुनः)

धीरे-धीरे भोगभूमि में,
बारह कुलकर के पश्चात्।
तेरहवें कुलकर प्रसेनजित,
पैदा हुए एक सन्तान।।
बस, वहीं से भोगभूमि के,
युगलिया की परम्परा हट गई।
प्रसेनजित के शुभ विवाह से,
कर्मभूमि प्रारम्भ हो गई।।

फिर इसके पश्चात् क्या हुआ था? आप जानना चाहते हैं न!

नाभिराय भी जन्में अकेले,
धरती के कुलकर चौदहवें।
उधर मरुदेवी पुत्री भी माता पिता की लाडली थी,
दोनों ने जब युवावस्था प्राप्त की थी।।

शंभुछन्द

सौधर्म इन्द्र ने जाना जब, ये तीर्थंकर को जन्म देंगे।
मरुदेवी के ही आंगन में, प्रभु ऋषभदेव जी खेलेगें।।
तब स्वर्गपुरी से आ उसने, दोनों का ब्याह रचाया था।
सारी नगरी को देवों ने, तोरण आदि से सजाया था।।६।।

गन्धर्व सुरों के वाद्य बजे, किन्नरियों ने संगीत रचा।
अप्सरियाँ नृत्य करें सुन्दर, स्वागत करें नाभिराय जी का।।
रचता है नगर अयोध्या तब सौधर्म इन्द्र मानो फिर से।
शाश्वत नगरी को नूतन कर, ऊँचे जिन भवन बना करके।।७।।

सर्वतोभद्र नामक इक्यासी खन का महल बना सुन्दर।
राजा रानी को इन्द्र ने उसमें बसा दिया उत्सव पूर्वक।।
करके राज्याभिषेक उनका सुरपति निज अलकापुरी चला।
अब नाभिराय मरुदेवी को सांसारिक सुख साम्राज्य मिला।।८।।

कालचक्र चलता रहा,
बीत रहे जीवन के सुख क्षण
पता नहीं कुछ चला किसी को,
तभी एक दिन होता क्या है?-
(ऊपर आकाश से रत्नों की धार गिरती हुई दिखावें)

शंभुछन्द

मरुदेवी माँ के आँगन में रत्नों की धार बरसती है।
माँ समझ गई उसका कारण निज भाग्य को धन्य समझती है।।
अब से छह माह बाद गर्भ में तीर्थंकर शिशु आएगा।
तब मेरा एवं जग भर का सौभाग्य स्वयं जग जाएगा।।९।।

इक दिन माता शयन कर रही,
आषाढ़ वदी दुतिया की तिथि थी।
रात्रि के पिछले प्रहर में,
इक घटना घटती है-

(गर्भकल्याणक)

इक दो या तीन नहीं सोलह, सुपने देखे मरुदेवी ने।
मीठी-मीठी निंदिया से उठ प्रभुध्यान किया मरुदेवी ने।।
आ गये रात के स्वप्न याद तब सखियों से वह कहती है।
ले चलो मुझे पतिदेव पास जहाँ राज लक्ष्मी रहती है।।१०।।

गई कान्त के निकट,
और बैठी निज आसन पर जाकर।
पूछने पर नाभिराय के,
कहने लगी सुनो मम प्रियतम!
(गीत)

तर्ज- झुमका गिरा रे.....
सुपने देखे रे,
हे स्वामी! मैंने आज रात में सुपने देखे रे।

पहले में ऐरावत हाथी पुनः बैल अरु शेर दिखा।
लक्ष्मी देवी हार युगल चन्द्रमा तथा इक सूर्य दिखा।।
इक मछली का युगल कलश दो भरे हुए जल के देखे।
कमलों से संयुक्त सरोवर सागर अरु सिंहासन थे।।
हाँ सागर अरु सिंहासन थे.....
सुपने देखे रे, हे स्वामी मैंने आज रात में सुपने देखे रे।।१।।
स्वर्ग से आता इक विमान, नगेन्द्र भवन व रतनराशी।
बिना धुयें की अग्नि स्वप्न में कहती क्या बाते सांची।।
इन स्वप्नों के बाद नाथ इक बैल ने मुख में प्रवेश किया।
इनका फल हे प्रभो! आपसे सुनने का शुभ भाव हुआ।।
हाँ सुनने का शुभ भाव हुआ.....
सुपने देखे रे, हे स्वामी मैंने आज रात में सुपने देखे रे।।२।।

धन्य हो, धन्य हो, देवी! तुम धन्य हो,
तुम्हारे उदर से तीर्थंकर का जन्म हो।
देवी तुम धन्य हो, देवी तुम धन्य हो।
स्वप्न का फल सुनो!
तुम्हीं एकमात्र नहीं,
सभासदों! तुम भी सुनो!

शंभुछन्द

हे मरुदेवी! तुम प्रथम स्वप्न फल में त्रिभुवन गुरु पाओगी।
जग भर में ज्येष्ठ, प्रतापी तीर्थंकर की माँ कहलाओगी।।
वह धर्मतीर्थकर्ता, सुमेरु पर्वत पर उसका हो जन्माभिषेक।
जग को आनन्द प्रदायक रवि सम कान्ति धरा का सूर्य एक।।११।।
सब निधियों का स्वामी एवं वह परम सुखों को पाएगा।
वह सहस लक्षणों से शोभित, केवलज्ञानी बन जाएगा।।
सिंहासन का फल हे देवी! वह जगद्गुरु कहलाएगा।
अवतीर्ण स्वर्ग से होगा अवधिज्ञान सहित वह आएगा।।१२।।

रत्नों की राशि देखने से सम्पूर्ण गुणों का आकर है।
निर्धूम अग्नि से कर्म जलाएगा वह स्वयं प्रभाकर है।।
मुख में जो बैल प्रविष्ट हुआ उसका फल यही समझ लो तुम!।
पुनश्च- सुरपति वंदित वे तीर्थंकर बस अब गर्भ में आन बसेंगे तुम।।१३।।

(कुबेर द्वारा रत्नवृष्टि, जयजयकार--भगवान् ऋषभदेव की जय, मरुदेवी माता की जय,अयोध्या नगरी की जय)

गर्भ कल्याणक का सामूहिक नृत्यगीत

धरती का तुम्हें नमन है, अम्बर का तुम्हें नमन है।
चन्दा सूरज करें आरती, छुटते जनम मरण हैं।।सौ-सौ बार नमन है....
ऋषभदेव जिनवर के युग को सौ-सौ बार नमन है।।धरती.....।।

प्रभु का गर्भकल्याणक उत्सव इन्द्र मनाया करते।
छह महीने पहले कुबेर रत्नों की वर्षा करते।।
तीर्थंकर माँ के आंगन में, बरसे खूब रतन हैं।।सौ-सौ बार.....।।१।।

पिता उन्हीं रत्नों को जनता में वितरित कर देते।
रत्न प्राप्त कर सभी लोग निज भाग्य धन्य कर लेते।।
धरती रत्नमयी बन जाती, पुलकित हुआ गगन है।।सौ-सौ बार.....।।२।।

जन्म कल्याणक

शुभ चैत्रवदी नवमी तिथि का पावन पवित्र दिन है आया।
जब तीर्थंकर श्री ऋषभदेव सा सुत मरुदेवी ने पाया।।
बज उठे नगाड़े स्वर्गों में इन्द्रों के आसन कांप उठे।
सुरकल्पवृक्ष से पुष्प स्वयं गिरकर प्रभु का सम्मान करें।।१३।।

उस क्षण की खुशियों का वर्णन नहिं सरस्वती भी कर सकती।
तीर्थंकर के पितु मात की महिमा यह जिह्वा क्या कह सकती।।
कोटी-कोटी जन्मों में संचित पुण्य उदय अब आया है।
इसलिए पिता माता बनने का स्वर्णिम अवसर पाया है।।१४।।

श्री नाभिराय जी पुत्र जन्म का उत्सव अद्भुत मना रहे।
सारी जनता को दान किमिच्छक बाँट-बाँट धन लुटा रहे।।

आ गया स्वर्ग से इन्द्र तभी ऐरावत हाथी पर चढ़ कर।
जय जयकारों से गुंजा दिया देवों ने नगरि अयोध्या तब।।१५।।

कर नमस्कार पितु नाभिराय को,
जन्मोत्सव मनाने की आज्ञा मांगी।
शचि को भेजा प्रसूतिगृह में,
जिनशिशु देखने की इच्छा जागी।
कहता है इन्द्र तब-

शंभुछन्द

हे इन्द्राणी जाओ अन्दर, तुम प्रथम प्रभु का दर्श करो।
निज स्त्रीलिंग छेद हेतु, तीर्थंकर का स्पर्श करो।।
जल्दी लाकर दे दो मुझको, प्रभु दर्शन इच्छा पूर्ण करूँ।
प्रभु को सुमेरु पर ले जाकर, उनका जन्मोत्सव खूब करूँ।।१६।।

हौले-हौले शची गई अन्दर,
माता को मायामय निद्रा में सुलाकर,
उनके पास से प्रभु को उठाकर।
देख लिया पहले जी भरकर,
फिर वह लेकर आई बाहर।
इन्द्र करे मनुहार,
देदे प्रभु को मुझे मेरी नार।
मेरी आकुलता का नहीं है अब पार,
अब मुझे प्रभु का जन्मोत्सव मनाने का
मिला है पूरा अधिकार
इन्द्राणी की गोदी से लेकर
झूम उठा इन्द्र अपनी विजय पर
कहने लगा वह नाच कर-

भजन

नाम तिहारा तारण हारा, कब तेरा दर्शन होगा।
तेरी प्रतिमा इतनी सुन्दर, तू कितना सुन्दर होगा।।
जाने कितनी माताओं ने, कितने सुत जन्में हैं।
पर इस वसुधा पर तेरे सम, कोई नहीं बने हैं।।
पूर्व दिशा में सूर्य देव सम, सदा तेरा सुमिरन होगा।
तेरी प्रतिमा इतनी सुन्दर, तू कितना सुन्दर होगा।।

शंभुछन्द

ले चला इन्द्र ऐरावत पर, तीर्थंकर प्रभु जिनबालक को।
चारों निकाय के देव देवियाँ, उत्सव मनावन को।।
सिर पर है छत्र चंवर ढुरते, प्रभु के वैभव का पार नहीं।
सौधर्म इन्द्र सम जन्मोत्सव नहिं मना सके संसार कहीं।।१७।।

मेरू की पांडुक शिला ऊपर प्रभु को ले जाकर बिठा दिया।
ऊपर से नीचे क्षीरोदधि तक देवपंक्ति को बना दिया।।
क्षीरोदधि के इक सहस आठ कलशों को प्रभु पर ढुरा दिया।
विक्रिय ऋद्धी से एक साथ उन सब कलशों को उठा लिया।।१८।।

फिर शचि ने कर श्रृंगार शिशु को वस्त्राभूषण पहनाए।
लाकर माँ को सौंपा बालक फिर सब मिल पालना झुलवाएं।।
मरुदेवी चूमे बार-बार अपने ललना को पलना में।
कहिं नजर न लग जावे लल्ला को नजर उतारे पलना में।।१९।।

पालना गीत

आदीश्वर झूलें पालना, मरुदेवी लोरी गावे।
मरुदेवी लोरी गावें, सब देवी उन्हें झुलावें।।आदीश्वर.।।
कहाँ प्रभू को जनम भयो है-२
कौन झुलावे पालना, मरुदेवी लोरी गावें।।आदीश्वर.।।
नगरि अयोध्या में जनम भयो है-२
इन्द्र झुलावे पालना. मरुदेवी लोरी गावें।।आदीश्वर.।।

नगरि अयोध्या के नर-नारी-२
सभी झुलावें पालना, मरुदेवी लोरी गावें।।आदीश्वर.।।
यही आज मैं भी प्रभु चाहूँ-२
पाऊँ तुम सा पालना, मरुदेवी लोरी गावें।।आदीश्वर.।।

देखो! प्रभु अब बढ़ने लगे,
धरती पे थोड़ा सरकने लगे,
थोड़ा घुटनों के बल वे तो चलने लगे,
तोतली बोली में बात करने लगे,
उनकी बाल कीड़ा लखकर,
माँ फूली नहीं समाती है।
तीर्थंकर बालक को पाकर,
वह धन्य धन्य हो जाती है।

शंभुछंद

धीरे-धीरे शिशु ऋषभदेव की दूज चन्द्र सम कान्ति बढ़ी।
पलने से निकल कर घुटनों के बल चलने की प्रक्रिया बढ़ी।।
स्वर्गों से सुरबालक आकर प्रभु के संग खेल खेलते थें।
भोजन वे घर का नहिं करते स्वर्गों से इन्द्र भेजते थे।।२०।।

वे स्वयंबुद्ध बह्मा खुद ही सब विद्याओं में प्रवीण हुए।
बचपन से युवा अवस्था पाने तक सबमें परिपूर्ण हुए।।
धरती पर तब तक कल्पवृक्ष का अन्त काल भी आ पहुँचा।
सम्पूर्ण प्रजा में त्राहि त्राहि जीवन रक्षास्वर गूँज उठा।।२१।।

सब नर नारी पितु नाभिराय के पास में जा अरदास किया।
तब नाभिराय ने ऋषभदेव के निकट सभी को भेज दिया।।
बोले! जाओ तीर्थंकर प्रभु अब समाधान इसका देंगे।
धरती मानव को जीवन जीने की कला सिखाएंगे।।२२।।

गई प्रजा प्रभु के सम्मुख,
हमें सिखाओ तुम ही कुछ,
हे प्रभो! जियें कैसे?
क्या खाएं व रहे कैसे? रक्षा करो, रक्षा करो।

शंभुछंद

बोले प्रभु समझ गया मैं सब कुछ तुम सब चिन्तामुक्त रहो।
हे प्रजाजनों, अब कल्पवृक्ष जा रहे वृक्ष की शरण गहो।।
धरती तुमको सब कुछ देगी कुछ कर्म तुम्हें करना होगा।
अब भोगभूमि से कर्मभूमि का मनुज तुम्हें बनना होगा।।२३।।

खेतों में अन्न उगाओ तुम इस गन्ने का रस पान करो।
गेहूँ, चावल, मेवा, फल को खा जीवन में कुछ काम करो।।
असि, मसि, कृषि, विद्या, शिल्प और वाणिज्य क्रिया बतलाता हूँ।
इनसे जीवन संचालित करने की ही विधी बताता हूँ।।२४।।

(-जय हो, भगवान् ऋषभदेव की जय हो, परमपिता परमेश्वर की जय हो-)

सामूहिक स्वर-प्रभो! तुमने जो बताई कलाएं हमें हैं!
तदनुसार जीवन में हम चल पड़ेगे!
तुम्हीं हो विधाता प्रजा के हो पालक!
तुम्हीं कर्मभूमि के सच्चे सुधारक!
तुम्हारी सुकीर्तिपताका जगत में!
सदा फैलती ही रहे इस गगन में!

(-जय प्रभो, जय प्रभो, सब मिल बोलो- जय आदीश्वर, जय वृषभेश्वर-२-)

(बस, यहाँ से कर्मभूमि का मानव अपने पुरुषार्थ पूर्वक जीवन का संचालन करने लगा। व्यापार करना, खेती करना, तलवार चलाना, मुनीमी करना, लिखना-पढ़ना, शस्त्र चलाना, चित्र बनाना ये सारी क्रियाएं भगवान् ऋषभदेव ने ही तो बताई थीं जो आज तक भी चली आ रही हैं। इसलिए इन्हें हम सम्पूर्ण संस्कृति के आद्यप्रणेता कहते हैं।)

शंभुछन्द

कुछ और काल बीता वैवाहिक क्षण भी जीवन में आए।
सौधर्म इन्द्र पितु नाभिराय की आज्ञा लेने को आए।।
पितुआज्ञा से प्रभु की स्वीकृति मिलते ही घड़ियाँ बदल गई।
साकेतपुरी में ऋषभदेव की परिणय बेला प्रगट हुई।।२५।।

दो सुन्दर बाला इसी देश के राजा की कन्याएं है।
तीर्थंकर सा पति पाने को जिनकी उत्कट इच्छाएं हैं।।
अपना सौभाग्य सराह रहीं वे यशस्वती व सुनन्दा हैं।
उनका तो जीवन धन्य हुआ लगती वे सूरज चन्दा हैं।।२६।।

श्री ऋषभदेव ने निज गृहस्थ जीवन को अब प्रारम्भ किया।
सम्यग्दृष्टि के योग्य विषय भोगों का कुछ आनन्द लिया।।
भरतादि पुत्र शत एक पुत्रि को यशस्वती ने जन्म दिया।
सुत बाहुबली व सुन्दरी ने सुनन्दा माँ से जन्म लिया।।२७।।

चल रही कथा उन ऋषभदेव की जो तन सुख में डूबे हैं।
श्रीनाभिराय भी पुत्र-पौत्र के संग सुखों में डूबे हैं।।
इक दिन विचार आया उनको निज राजमुकुट तजना चहिए।
युवराज ऋषभ को राजा कहकर राजतिलक करना चहिए।।२८।।

बस शुभ मुहूर्त में इन्द्र ने आ राज्याभिषेक करवाया है।
अब राज्य संभालो राजकुंवर तुमसे न छिपी कुछ माया है।।
सब देश-देश के राजा गण निज भेंट चढ़ाने आते हैं।
प्रभु के चरणों में शीश झुका पितु की भी प्रशंसा गाते हैं।।२९।।

सिंहासन पर महाराज विराजे,
नाभिराय के पुत्र विराजे।
जहाँ का हो राजा तीर्थंकर,
इन्द्र जहाँ हो उनका किंकर।
वहाँ कमी क्या हो सकती है?
सभी प्रजा में प्रेम परस्पर।

सामूहिक गीत

तर्ज- लिया प्रभु अवतार.....

लगा प्रभू दरबार, जयजयकार जयजयकार जयजयकार।
अवध के ऋषभकुमार, जयजयकार जयजयकार जयजयकार।।
आज खुशी है आज खुशी है, हमें खुशी है तुम्हें खुशी है।
खुशियां अपरंपार, जयजयकार जयजयकार जयजयकार।।१।।
पुष्प और रत्नों की वर्षा , सुरपति करते हर्षा-हर्षा।
बजे दुन्दुभी सार, जयजयकार जयजयकार जयजयकार।।२।।
आवो हम सब प्रभु गुण गाएं, सत्य अहिंसा ध्वज फहरावें।
सब जग मंगलकार, जयजयकार जयजयकार जयजयकार।।३।।

शंभुछन्द

प्रभु आज्ञा से सुरपति ने आ सब नगर ग्राम भी बना दिए।
प्रभु ने अनेक राजाओं को फिर पृथक्-पृथक् थे राज्य दिए।।
उन सबको दे उपदेश धर्ममय राजनीति बतलाई है।
खुद न्यायनीति संचालित कर राजा की प्रथा निभाई है।।३०।।

(दीक्षा कल्याणक)

दोहा – बहुत समय तक राज्य में, बीता प्रभु का काल।
एक दिवस तब इन्द्र को, आया उनका ख्याल।।३१।।

सोचा उसने प्रभु के सम्मुख, ऐसा निमित्त प्रस्तुत कर दूँ।
हो जावें वैभव से वे विमुख, ऐसा सुकृत्य कर दूँ।।
जब राजसभा में आदिनाथ, सिंहासन पर थे शोभ रहे।
अपनी जनता की खुशियों को सुन सुखसागर में डोल रहे।।३२।।
सुरपति ने नृत्यहेतु अल्पायु नीलांजना को भेज दिया।
उसके मरते ही तत्क्षण दूजी देवांगना का प्रवेश हुआ।।
नहिं जान सका कोई लेकिन वृषभेश्वर ने पहचान लिया।
बस उसी समय उनको इस चंचल वैभव से वैराग्य हुआ।।३३।।

(भजन)

तर्ज - दिल के अरमॉ.....

प्रभु जी सिद्धीकांता वरने चल दिए,
संग में चार हजार राजा चल दिए।टेक.।।
सारी धरती पर भू का राज्य था, किन्तु प्रभु को हो गया वैराग्य था।
तज के सब संसार वे तो चल दिए,
संग में चार हजार राजा चल दिए।।
वन में जाकर नग्न दीक्षा धारली, अवध की जनता भी दुखी अपार थी।
पंचमुष्टी केशलुंचन कर लिए,
संग में चार हजार राजा चल दिए।।

शंभुछन्द

वह तिथि थी चैत्र वदी नवमी जब दीक्षा प्रभु ने ग्रहण किया।
षट्मास योग में लीन हुए नगरी प्रयाग को धन्य किया।।
उनके संग चार हजार और राजा भी दीक्षित हुए तभी।
पर भूख प्यास की बाधा ने सबको विचलित कर दिया कभी।।३४।।
षट्मास योग पश्चात् प्रभो मुनिचर्या बतलाने निकले।
लेकिन कोई नहिं जान सके क्यों नाथ भ्रमण करने को निकले।।
कोई कहते प्रभु मेरी कन्या ग्रहण करो भोजन करलो।
कोई देते वस्त्राभूषण कुछ कहते प्रभो बचन बोलो।।३५।।
पर तीर्थंकर तो दीक्षा के पश्चात् मौन ही रहते हैं।
केवलज्ञानी बनकर ही ऊँकार दिव्यध्वनि कहते हैं।।
उनको न चाहिए था वैभव वस्त्राभूषण वे क्या करते।
जो इच्छा थी वह कुछ न मिला छह मास भ्रमण करते करते।।३६।।
संयोग देखिए एक दिवस हस्तिनापुरी वे पहुँच गए।
सोमप्रभ नृप श्रेयांस उसी क्षण इन्तजार में खड़े हुए।।

कुछ पूर्वभवों की स्मृति वश श्रेयांस तुरन्त ही बोल पड़े।
हे स्वामी! अत्र तिष्ठ आदि उनके स्वर झरने फूट पड़े।।३७।।

था इन्तजार इस क्षण का ही आदीश मुनी हो गए खड़े।
नवधा भक्ति की शक्ती से प्रभु चरण सोम के महल पड़े।।
उस प्रथम पारणा में राजा ने इक्षूरस आहार दिया।
पंचाश्चर्यों की वृष्टि हुई जग भर में जयजयकार हुआ।।३८।।

वैशाख सुदी तृतिय अक्षयतृतिया संज्ञा से प्रसिद्ध हुई।
आहारदान की विधी धरा पर पहली बार प्रसिद्ध हुई।।
भरतेश ने उन राजा श्रेयांस का बहुत बड़ा सम्मान किया।
तुम दानतीर्थ के प्रवर्तक हो यह कहकर जग में नाम दिया।।३९।।

आहार विधी जब ज्ञात हुई तब से मुनि धर्म चला जग में।
वह अब तक भी चल रहा युगों तक चला करेगा क्रम क्रम से।।
हस्तिनापुरी की यह घटना सतयुग से कलियुग है आया।
पर इस धरती के इक्षू रस ने अक्षयता को है पाया।।४०।।

(केवलज्ञान कल्याणक)

अब आगे मैं ले चलूँ प्रभु की तपशक्ति बताने को।
तप करते करते बीत गए इक सहस वर्ष तीर्थंकर को।।
वे एक दिवस थे "पुरिमतालपुर" के उद्यान में खड़े हुए।
तब शुक्लध्यान की अग्नी से उन घाति कर्म सब नष्ट हुए।।४१।।

तत्क्षण कैवल्य रमा ने आ उनको वरमाला पहनाई।
धनपति ने समवसरण रचना कर दिव्य विभूति प्रगटाई।।
अन्तर बाहर दोनों लक्ष्मी जिनवर के चरण पखार रही।
प्रभु जी की दिव्यध्वनि सुनने को जनता उन्हें निहार रही।।४२।।

आकाशगर्जना सम दिव्यध्वनि ऊँकारमय प्रगट हुई।
पशु-पक्षी, देव-मनुज सबने निज निज भाषा में ग्रहणकरी।।

उस जिनवर वाणी को ही अब सारे जग में पहुँचाना है।
इस समवसरण के माध्यम से प्राकृतिक धर्म फैलाना है।।४३।।

मेरे प्यारे भाइयों, बहनों!
आज न सच्चा समवसरण है
और न तीर्थंकर दर्शन है
फिर भी जिन प्रतिमा में अतिशय
समवसरण रचना में अतिशय
इसकी ही भक्ति करो
फल पाओगे और
इक दिन अमर बन जाओगे,
तो गाओ सब मिल करके -

भजन

तर्ज - फूलों सा चेहरा तेरा.....

जिनवर की वाणी अमर, जग को सुनाना है,
आप स्वयं भी जिओ दूसरों को जीने दो, सबको बताना है।।
कलियुग में जिनवर होते नहीं पर,
मुनिवर की पदवी दुर्लभ नहीं है।
जिनवर के लघुनन्दन मुनिवरों की,
वाणी सभी को सुलभ हो रही है।।
ज्ञान पिपासू को, आत्म जिज्ञासू को, भाती है प्रभु की अमर भारती।
माँ वाणी को मन में धर, जीवन बनाना है।
आप स्वयं भी जिओ दूसरों को जीने दो.....

ऋषभदेव की दिव्य सभा में,
गणधर मुनिवर ही प्रधान थे।
जो भी आता वह ठगा वैभव को देखकर।
वह तिथि धन्य हुई,

शंभुछन्द

फाल्गुन कृष्णा ग्यारस तिथि थी जब प्रभु को केवलज्ञान हुआ।
प्रभु समवसरण के श्री विहार से जन-जन का कल्याण हुआ।।
रत्नों की वृष्टि करे कुबेर जन जन को भी वितरित करता।
सौधर्म इन्द्र किंकर बन कर प्रभु सम्मुख सदा खड़ा रहता।।४४।।

जब समवसरण विघटित होता जिनराज अधर ही चलते हैं
उन चरण कमल तल स्वर्ण कमल स्वयमेव इन्द्रतव रचते हैं।।
कमलों से ऊपर अधर चार अंगुल उनके पग पड़ते हैं
वैभव में रहकर वीतारागता का आनन्द वे चखते हैं।।४५।।

दुनियां में सबसे उत्तम एवं हितकारी है समवसरण।
इसलिए ज्ञानमती गणिनी माताजी का है यह सत्य कथन।।
प्रभु ऋषभदेव के समवसरण का श्रीविहार हो भारत में।
हिंसा का तांडव दूर भगे करुणा का स्रोत बहे जग में।।४६।।

जहाँ शेर गाय भी वैर भाव तज एक घाट जल पीते हैं।
जहाँ सर्प नेवला क्रूर पशु भी साथ-साथ ही जीते हैं।।
उस समवसरण का कुछ प्रभाव मानव मनपर निश्चित होगा।
जो दर्शन इसका कर लेगा उसके पापों का क्षय होगा।।४७।।

(मोक्षकल्याणक)

ये श्रीविहार की चर्चाएं जितनी भी सुनो उतनी ही कम हैं।
लेकिन निर्वाणकल्याणक भी देखो अब तुम्हें समय कम है।।
सबको शिवपथ बतलाने में श्रीजिनवर कभी न थकते हैं।
निज आयुकर्म को निकट जान कैलाशगिरि जा बसते हैं।।४८।।

तीनों योगों की क्रिया रोक एकाग्र ध्यान में रमते हैं।
चौदह दिन के पश्चात् ऋषभ प्रभु शिवलक्ष्मी को वरते हैं।।
आत्मा ने सिद्धशिला पर जाकर सिद्ध धाम को प्राप्त किया।
अक्षय अनन्त सुख में निमग्न नहिं पुनर्भवों को साथ दिया।।४९।।

वे मोक्ष गये तब भी इन्द्रों ने दीपावली मनाई थी।
निर्वाणकल्याणक की पूजाकर जग में धूम मचाई थी।।
फिर उनके गणधर वृषभसेन ने भरतराज को सम्बोधा।।
अफसोस करो मत हे राजन्! तुमने तो बहुत ज्ञान सीखा।।५०।।

उनके सुत भरत प्रथमचक्री जिनसे यह देश प्रसिद्ध हुआ।
थे कामदेव प्रभु बाहुबली जिनका तप त्याग प्रसिद्ध हुआ।।
सुत वृषभसेन प्रभु समवसरण में गणधर प्रथम कहाए हैं।
अनन्तवीर्य सुत इस युग में ही प्रथम मोक्षपद पाए हैं।।५१।।

पुत्री ब्रह्मी गणिनी पहली आर्याओं में अग्रणी हुई।
सुन्दरी भी दीक्षा धारण कर संयम पथ की एक मणी हुई।।
यह गाथा तीर्थंकर कुल की सब पुत्रों ने शिवधाम लिया।
भव भव के संस्कारों ने इस भव में आकर विश्राम लिया।।५२।।

प्रभु ऋषभदेव तो मोक्ष गए सबको भी वह पथ दिखा गए।
चौदह लख राजा उसी श्रृंखला में क्रम क्रम से मोक्ष गए।।
हे नाथ! मुझे भी परम्परा से मुक्तिधाम दिलवा दीजे।
"चन्दनामती" उससे पहले तुम भक्ति की शक्ती दीजे।।५३।।

दोहा – ऋषभदेव प्रभु का चरित, यह संक्षिप्त सुजान।
तृतियकाल के अन्त का, है यह कथन महान।।५४।।